आधुनिक विश्व परिदृश्य में भारत नेपाल सम्बन्धों की भूमिका

धर्म निरपेक्ष, कल्याणकारी, गणतंत्रीय राष्ट्र भारत और अधिनायकीय साम्यवादी देश चीन के मध्य स्थित राजतंत्र एवं लोकतंत्र के मध्य उलझा हुआ हिन्दू राष्ट्र नेपाल, हिमालय पर्वत के दक्षिणी ढाल पर अवस्थित एक ऐसा देश है जो दक्षिण एशिया की राजनीति का प्रमुख केन्द्र बन गया है।[1]

पृथ्वी नारायण शाह (1723-1774) जिसने कि गोरखा के एक छोटे से राज्य का सिंहासन सन् 1742 में सम्भाला, को आधुनिक नेपाल का जनक माना जाता है। पृथ्वी नारायण ने मात्र नेपाल राज्य की नींव ही नहीं रखी, बल्कि उसकी विदेश नीति को उजागर किया जो कि बहुत ही प्रभावशाली साबित हुई, जिसके परिणाम स्वरूप वहां एक विशेष प्रकार का परिवर्तन देखने को आया, जिसमें कि उसने तर्कों को दो रूपों में प्रस्तुत किया। प्रथम, उसने भारत और चीन के मध्य निष्पक्ष व तटस्थ नीति तथा दोनों देशों के साथ दोस्ती की नीति पर बल दिया। उसने कहा, "हमारा देश एक कन्द की तरह है जो कि दो चट्टानों के बीच उगा है। चीन साम्राज्य के साथ हमें दोस्ताना सम्बन्ध अवश्य बनाये रखना चाहिए और दक्षिण समुद्र के शासक जो बहुत चालाक हैं उनके साथ भी हमें अच्छे सम्बन्ध बनाये रखना होगा।"[2]

अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर नेपाल विगत वर्षों में महत्वपूर्ण राजनीतिक एवं कूटनीतिक स्तर प्राप्त करने में सफल रहा है पूर्व में अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों की दृष्टि से ब्रिटेन को नेपाल के साथ सम्बन्ध बनाने का महत्वपूर्ण अवसर 1816 की संधि से प्राप्त हुआ इस संधि के परिणाम स्वरूप नेपाल की विदेश नीति से स्वायत्तता समाप्त हो गयी और 1857 के भारतीयों के प्रथम स्वतन्त्रता आन्दोलन के दौरान गोरखा सैनिकों ने इस आन्दोलन को कुचलने मे ब्रिटेन की सहायता की[3] तत्पश्चात तत्कालीन नेपाल नरेश औपनिवेशिय भारत के साथ 1923 में शांति और मैत्री का पहला

लिखित समझौता किया और ब्रिटेन ने औपचारि रूप से नेपाल को स्वतन्त्र एवं सप्रभुता सम्पन्न राष्ट्र स्वीकार कर लिया इस दौरान गोरखा सैनिकों ने द्वितीय विश्वयुद्ध में ब्रिटेन की ओर से युद्ध में सक्रिय भाग लिया।

भरतीय स्वतंत्रता के पश्चात भारत ब्रिटेन एवं नेपाल के मध्य यह सहमति हुई कि नेपाली गोरखाओं के 8 बटालियनों को ब्रिटेन समायोजित करेगा।[4]

एशियाई देशों में नेपाल सबसे कम विकसित देश एवं दक्षिणी एशिया का एकमात्र प्रभुता सम्पन्न राष्ट्र है।नेपाल को संयुक्त राष्ट्र संघ, भारत, चीन, संयुक्त राज्य अमेरिका व पश्चिमी यूरोप से समय - समय पर आन्तरिक क्षेत्रों में सामाजिक व आर्थिक क्रियाओं के विकास हेतु अनुदान मिलता है।

पूर्व नेपाल नरेश विरेन्द्र द्वारा अपने शांति क्षेत्र प्रस्ताव का अन्तर्राष्ट्रीय करण करने का अथक प्रयास किया गया। इस सन्दर्भ में नरेश विरेन्द्र अनेक राष्ट्रों की यात्राओं पर गये अनेक राष्ट्राध्यक्षों एवं प्रतिनिधयों से मिले 1980 तक विश्व के लगभग 85 देशों ने इस पर अपना समर्थन भी दे दिया।[5] इन तथ्यों से यह स्पष्ट हो जाता है कि क्रमशः नेपाल अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपने विदेशनीति का स्वतंत्र संचालन करने में सफलता प्राप्त करता रहा। नेपाल के शांति क्षेत्र, प्रस्ताव को अमेरिकी राष्ट्रपति रीगन ने महत्वपूर्ण माना। चीनी प्रधानमंत्री ने 1974 में नेपाल के शांति क्षेत्र प्रस्ताव का समर्थन किया सोवियत संघ, बंग्लादेश, श्रीलंका द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इस प्रस्ताव का समर्थन किया। लेकिन भारत ने अन्तर्राष्ट्रीय समर्थन को नज़रन्दाज़ करते हुए इस प्रस्ताव को स्वीकार करने में कोई रूचि नहीं दिखायी।

1990 के दशक तक नेपाल के शान्ति क्षेत्र प्रस्ताव में विश्व के 115 देशों ने समर्थन दे दिया।[6] इस क्षेत्र में सभी औद्योगिक राष्ट्रों ने भी समर्थन किया है। जैसे - संयुक्त राष्ट्र, कनाडा,

ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी-गणराज्य और आस्ट्रेलिया। सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक असमानता होते हुए भी कई राष्ट्रों ने समर्थन किया जैसे - लीबिया, इज़राइल, बर्मा, अलबेनिया, ईरान, निकारागुआ और सउदी अरब। इस तरह शांति क्षेत्र प्रस्ताव का प्रभाव विश्व के सभी छोटे - बड़े देशों पर पड़ा।

अमेरिका ने नेपाल के माओवादियों को अब आतंकवादियों की सूची में डाल दिया है। एक मई, 2003 को जिसने भी अखबारों में यह खबर पढ़ी कि 'नेपाल की कम्युनिस्ट पार्टी' (माओवादी) संयुक्त जन मोर्चा को अमेरिका ने आतंकवादी संगठनों की सूची में शामिल कर लिया है, वह हैरान रह गया। इसकी मुख्य वजह यह है कि इन दिनों माओवादियों के साथ नेपाल सरकार की शांति वार्ता चल रही है और अभी 27 अप्रैल, 2003 को ही बातचीत का पहला दौर समाप्त हुआ है। इससे भी जयादा महत्वपूर्ण बात यह है कि इसी वर्ष 29 जनवरी, 2003 को सरकार और माओवादी विद्रोहियों के बीच युद्ध विराम लागू होने से पूर्व सरकार ने एक पूर्व शर्त के रूप में इन्हें 'आतंकवादी' कहनाबंद किया और वह आदेश वापस ले लिया जिसमें इनके नेताओं की गिरफ्तारी पर इनाम की घोषणा की गई थी। नेपाल के अंदर काम करने वाले संगठन को अगर वहां की सरकार आतंकवादी नहीं मानती है तो अमेरिका किस आधार पर उसे आतंकवादियों की सूची में शामिल कर रहा है?[7]

नेपाल के माओवादी अपने देश के अंदर राजशाही की समाप्ति और साम्यवादी शासन की स्थापना के लिए संघर्ष कर रहे हैं। वे नेपाल के उसी कम्युनिस्ट आंदोलन के अंग हैं जिससे देश की प्रमुख विपक्षी पार्टी नेकमा (एमाले) निकलती है और जिसे एक बार सरकार चलाने का भी अवसर मिल चुका है। लेकिन एक फर्क है जो बहुत बड़ा है - और वह यह है कि नेकपा एमाले संसदीय पार्टी बनकर रह गयी। माओवादियों को संसद का बहिष्कार करते हुए सशस्त्र संघर्ष का रास्ता चुनना पड़ा। अगर माओवादी अमेरिका के राष्ट्रीय हितों के लिए खतरनाक नहीं हैं तो उन्हें 30 अप्रैल, 2003 को कालिन पॉवेल द्वारा जारी इस नई सूची में क्यों शामिल किया गया?

दरअसल माओवादी अमेरिका के राष्ट्रीय हितों के लिए नहीं बल्कि व्यापक तौर पर अमेरिकी साम्राज्यवाद और विश्व पूंजीवाद के लिए खतरनाक है। यही वजह है कि 1996 से, जब से उन्होने 'जनयुद्ध' की शुरूआत की, अमेरिका चौकन्ना हो गया। शुरू के कुछ महीनों तक वह इस इंतजार में था कि यह आंदोलन दम तोड़ देगा लेकिन जब इसके आधार क्षेत्र का विस्तार होने लगा और समर्थकों की संख्या बढ़ने लगी तब अमेरिका सक्रिय हुआ। सोवियत संघ के विघटन के बाद सारी दुनिया में 'सभ्यताओं के संघर्ष' का दौर शुरू हुआ। यही वजह है कि 1997 के बाद से अमेरिकी विदेश विभाग, अमेरिकी रक्षा विभाग तथा अमेरिका की विभिन्न खुफिया एजेंसियों की रिपोर्टो को देखें तो अमेरिकी राष्ट्रपति को यही सलाह दी गयी है कि वे यूरोप से ध्यान हटाएं क्योंकि वहां अब अमेरिकी हितों के लिए कोई खतरा नहीं है और सारा ध्यान दक्षिण एशिया पर लगांए।

नेपाल में यही हुआ; अमेरिकी अधिकारियों के लगातार बयान आ रहे थे कि दोनों पक्षों के बीच बातचीत से समाधान ढूंढा जाए और हिंसा बंद हो। दोनों पक्षों के बीच किसी न किसी तरह संवाद की स्थिति बनने लगी और इस दिशा में पहली बार 30 नवम्बर 2002 को एक सुखद संकेत उस समय मिला जब पत्रकारों से बात करते हुए नेपाल के गृहमंत्री धर्म बहादुर थापा ने कहा कि उनकी सरकार माओवादियों को आतंकवादी नहीं मानती और उन पर घोषित इनाम जल्दी ही समाप्त किया जाएगा। इससे पहले 20 नवम्बर 2002 को महिला और समाज कल्याण मंत्री गोरे बहादुर खपांगी ने यह संभावना व्यक्त की थी कि माओवादी नेताओं की गिरफ्तारी पर इनाम की जो घोषणा की गई है उसे सरकार वापस लेगी। इससे दो ही दिन पूर्व 18 नवम्बर 2002 को उप प्रधानमंत्री बद्री प्रसाद मंडल ने विराट नगर में पत्रकारों से कहा कि अगर माओवादी बातचीत के प्रति ईमानदार हैं तो सरकार संविधान सभा के चुनाव की मांग पर विचार कर सकती है।[8]

ऐसे में गृहमंत्री के बयान से माओवादियों के बीच एक अच्छा संदेश गया था अमेरिका को जब लगा कि बातचीत का वातावरण बन रहा है तो उसे भंग करने की जरूरत महसूस हुई। 14 नवम्बर 2002 को सहायक विदेश मंत्री और दक्षिण एशियाई मामलों की प्रभारी क्रिस्टीना रोक्का काठमांडो गईं और पत्रकारों से यह कहते हुए कि 'यद्यपि नेपाल की आंतरिक राजनीति में हस्तक्षेप करने का हमारा कोई इरादा नहीं है', उन्होने माओवादियों के खिलाफ काफी जहर उगला। उन्होंने यह भी कहा कि 'माओवादियों को अभी तक अधिकारिक तौर पर आतंकवादियों की सूची में नहीं डाला गया है लेकिन अगर उनकी हिंसा जारी रही तो हम यह कदम भी उठा सकते हैं। 29 जनवरी को युद्धविराम लागू होने के बाद अमेरिकी चिंता बढ़ी। 28 फरवरी को वाशिंगटन में अमेरिका के उपसहायक विदेश मंत्री डोनाल्ड कैंप ने एक आयोजन में भाग लिया जिसका शीर्षक था - 'प्रिवेंटिंग ए कम्युनिस्ट ओवर थ्रो ऑफ नेपाल।' इस आयोजन में डोनाल्ड कैंप ने साफ शब्दों में कहा कि अगर नेपाल में माओवादियों को सफलता मिलती है तो इससे अमेरिकी हितों को चोट पहुँचेगी! उन्होंने कहा कि अमेरिका नहीं चाहता कि माओवादियों का अस्तित्व बना रहे। इसके पीछे उन्होनें दलील दी कि 'माओवादियों से अमेरिकी हितों को खतरा है। उनके नेतृत्व ने स्पष्ट कर दिया है कि वे संवैधानिक राजतंत्र को समाप्त कर पूर्ण कम्युनिस्ट व्यवस्था लागू करना चाहते हैं - ऐसी व्यवस्था जो खुले तौर पर अमेरिका के प्रति शत्रतापूर्ण रूख रखती हो। डोनाल्ड कैंप ने यह भी बताया कि नेपाल की स्थिति पर अमेरिकी सरकार हर रोज ध्यान रखती है। ध्यान रहे कि डोनाल्ड कैंप का यह वक्तव्य उस समय का है जब माओवादियों और सरकार के बीच शांति कायम करने की प्रक्रिया शुरू हो गयी थी।

अमेरिका को सबसे बड़ी चिंता यह थी कि सरकार और माओवादियों के बीच अगर बातचीत सुचारू ढंग से चलते हुए किसी ऐसे निर्ष्कष तक पहुंचती है जिसमें माओवादी हिंसा का रास्ता छोड़कर जनतांत्रिक तरीके से राजनीति की मुख्यधारा में सक्रिय होते हैं तो अमेरिका के

लिए यह काफी मुश्किलें पैदा होंगी। वह तो इस इंतजार में है कि बातचीत विफल हो, माओवादी फिर बंदूक का सहारा लें और आतंकवाद के सफाए के नाम पर अमेरिका को सैनिक हस्तक्षेप का अवसर मिले। वैसे भी अमेरिका और बेल्जियम से हथियारों की एक - एक खेप नेपाल पहुंच चुकी है और लगभग पचास अमेरिकी सैनिक विशेषज्ञ नेपाली सेना के साथ संयुक्त सैनिक अभ्यास में लगे हैं।

अमेरिका के इरादों को स्पष्ट करने वाला एक विज्ञापन भी पिछले दिनों देखने को मिला। 26 फरवरी 2003 को यूएसएड ने अपने इंटरनेट साइट के जरिए कुछ 'पर्सनल सर्विसेज कांट्रेक्ट' (पीएससी) पद के लिए आवेदन आमंत्रित किया। इस विज्ञापन की भूमिका में कहा गया है कि नेपाल में मौजूदा माओवादी विद्रोह को देखते हुए यूएसएड अपने नवगठित स्पेशल प्रोजेक्ट ऑफिस के जरिए हस्तक्षेप का प्रयास कर रहा है। इसके लिए 2000-2005 की अवधि के लिए अपनी समग्र रणनीति में 'कांफ्लिक्ट प्रिवेंशन, मिटिगेशन एंड रेस्पांस' (सीपीएमआर) को स्थान दिया है और इसे सुचारू ढंग से चलाने के लिए स्पेशल प्रोजेक्ट ऑफिस का गठन किया है। पिछले वर्ष 15-16 मई को भारत के तत्कालीन थल सेनाध्यक्ष जनरल एस. पद्मनाभन ने और 27 मई को ब्रिटेन के सेना प्रमुख एडमिरल जनरल सर माइकल वायस ने नेपाल के माओवाद प्रभावित क्षेत्रों का दौरा किया। दोनों ने नेपाल सरकार को भरोसा दिया कि माओवादियों को समाप्त करने में वे भरपूर मदद करेंगे। 19 जून 2002 को ब्रिटेन की संसद में विदेश विभाग के मंत्री माइक ओ ब्रायन ने ब्रिटेन - नेपाल संसदीय ग्रुप के चेयरमैन सर जॉन स्टेनले के एक सवाल के जवाब में कहा कि 'हम अपने अमेरिकी सहयोगियों तथा अन्य देशों के साथ मिलकर उन तरीकों को ढूंढने में लगे हैं जिनसे माओवादी विद्रोह पर काबू पाया जा सके'। अमेरिका द्वारा माओवादियों को अपनी नई सूची में डालने से उसके इरादे बहुत खुलकर सामने आ गए हैं। कश्मीर हो या नेपाल अगर अमेरिका को यहां सैनिक उतारने की इजाजत दे दी गयी तो समूचे दक्षिण एशिया के लिए और खास तौर पर

भारत की सम्प्रभुता के लिए यह बहुत खतरनाक होगा। आज सभी समझदार तत्वों का प्रयास यही होना चाहिए कि नेपाल में जो शांति प्रक्रिया शुरू हुई है, उसे एक सही निष्कर्ष तक पहुंचाने में मदद की जाए। इसी में भारत का और दक्षिण एशिया का हित है।[9]

विश्वव्यापी प्रजातांत्रिक आन्दोलन के संदर्भ में उभरते नेपाली जनसंघर्ष ने भारतीय राजनीति प्रतिरूप की तो प्रेरणा ली ही साथ ही अनेक प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष कारकों ने भी भारत को प्रजातंत्र के इस नेपाली संघर्ष से जोड़ दिया। इसमें प्रमुख था-- भारत -नेपाल पारगमन समझौते से आयी सम्बन्धो की कटुता। जिसने नेपाल के आन्तरिक संघर्ष को भी प्रभावित किया।भारत द्वारा लगाये गये आर्थिक प्रतिबंधो ने नेपाली सरकार की कमजोरी को उजागर किया और इसी क्रम में पुष्ट किया।प्रजातंत्र की पुनः स्थापना के लिये उठे आन्दोलन को भी इस तरह से दोनों राष्ट्रों की आन्तरिक राजनीतिक व्यवस्था के अप्रत्यक्ष टकराव ने भी इन दोनों राष्ट्रों के वैदेशिक सम्बन्धो को नियमित रूप से प्रभवित किया।[10] तत्कालीन नेपाली राष्ट्रीय सभा में भारतीय पर्यवेक्षको के अतिरिक्त अमेरिकी राजदूत,प0 जर्मनी और इजराइल के राजनयिकों ने भी भाग लिया। रूस से भी बल मिला।अंत में 20 जनवरी 1990 को ये सभा समाप्त हो गयी। इस सभा को अंतराष्ट्रीय समाजवादी अध्यक्ष विलीब्रांट,भारतीय कांग्रेस आई अध्यक्ष राजीव गांधी,सिक्किम मुख्यमंत्री नर बहादुर भंडारी,प0 जर्मनी के समाजवादी दल,जापान की समाजवादी दल और ब्रिटेन की लेबर पार्टी द्वारा लोकतंत्र को सफल बनाने की शुभकामनायें दी गयी।[11]

आधुनिक विश्व परिदृश्य में भारत नेपाल सम्बन्ध कई प्रकार की भूमिका का निर्वाह करते हैं इन दोनों राष्ट्रों में होने वाली घटनाएं एक दूसरे के साथ - साथ अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य को भी प्रभावित करती हैं चाहे नेपाल में माओवाद की समस्या हो चाहे राजशाही द्वारा लोकतांत्रिक सरकार को बर्खास्त करने की बात हो या नेपाल में अपातकाल घोषित करना हो इन सभी घटनाओं का नेपाल और भारत के साथ - साथ अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य पर भी प्रभाव पड़ता है।

जब नेपाल नरेश ज्ञानेन्द्र द्वारा 1 फरवरी 2005 को नेपाली प्रधानमंत्री शेर बहादुर देउबा को अपदस्त कर आपातकाल लगाने, राजनीतिज्ञों को हिरासत में लेने के अलोकतांत्रिक कार्यवाही की गयी तो भारत के साथ - साथ विश्व के कई राष्ट्रों ने चिन्ता व्यक्त की।[12]

नेपाल नरेश ज्ञानेन्द्र द्वारा सत्ता की बागडोर अपने हाथों में ले लेने से माओवादियों पर सिकंजा कसने के बजाय नेपाल में गृहयुद्ध का खतरा उत्पन्न हो गया है। यह सम्भावना इण्टरनेशनल क्राइसिस ग्रुप (आई.सी.जी.) ने जताई है इसी बीच भारत, अमेरिका और ब्रिटेन संयुक्त रणनीति बनाकर नेपाल में शीघ्रातिशीघ्र लोकतंत्र की बहाली की कोशिश कर रहे हैं। ब्रूसेल्स स्थित अन्तर्राष्ट्रीय विचार मंच इण्टरनेशनल क्राईसिस ग्रुप ने "नेपाल का शाही तख्ता पलट : नतीजा-स्थिति बद् से बद्तर" शीषर्क से जारी अपनी ताजा रिपोर्ट में कहा है कि एक फरवरी 2005 की घटना से नेपाल में गृहयुद्ध भड़कने और माओवादी गतिविधियाँ तेज होने की आशंका बढ़ गयी हैं। आई.सी.जी. के अध्यक्ष, ऑस्ट्रेलिया के पूर्व विदेशमंत्री गारेथ इवांस द्वारा यह रिर्पोट प्रस्तुत की गयी।[13]

भारतीय प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने बांग्लादेश की राजधानी ढाका में आयोजित दक्षिण एशियाई क्षेत्रिय सहयोग संगठन (दक्षेस) की शिखर सम्मेलन में नेपाल की घटनाओं के मद्देनज़र ढाका शिखर बैठक में भाग लेने से इनकार कर दिया।14

भारतीय रक्षा मंत्री प्रणव मुखर्जी ने नेपाल के घटनाक्रम पर यह संकेत दिया कि अगर नेपाल के घटनाक्रम पर यह संकेत दिया कि अगर माओवादी गतिविधियों का असर भारत पर पड़ा तो रॉयल नेपाल आर्मी को सैन्य सहायता देने पर विचार किया जा सकता है। मुखर्जी ने यह भी कहा कि नेपाल के साथ हमारी खुली सीमा है और माओवादियों का सम्बन्ध भारत के नक्सलियों से है। अगर भारत में गड़बड़ हुई तो नीति उसी के अनुरूप बनानी होगी। भारत नेपाल में बहुदलीय शासन प्रणाली एवं राजशाही का मिश्रण रहने के पक्ष में है।[15]

नेपाल में शेर बहादुर देउबा सरकार की बर्खास्तगी के बाद नेपाली कांग्रेस के नेता सहमें हुए हैं क्योंकि शाही सेना नेपाल के सक्रिय राजनीतिज्ञों को गिरफ्तार कर रही है जिसके चलते वे शरण लेने के लिए भारत आ रहे हैं तथा पत्रकारों के साथ भी दमनात्मक कार्यवाही की जा रही है और नेपाल में प्रेस पर पाबन्दी लगा दी गयी है। जिससे वहाँ की घटनओं के बारे में विश्व के अन्य राष्ट्रों को कोई भी सूचना प्राप्त नहीं हो पा रही है।

वर्तमान नेपाल नरेश ज्ञानेन्द्र अपने देश में लोकतन्त्र की बहाली के लिए भारत के दबाव का सामना कर रहे हैं। वर्तमान भारतीय प्रधानमंत्री डा. मनमोहन सिंह ने नेपाल से स्पष्ट रूप से कह दिया है कि भारत, नेपाल में बहुदलीय लोकतंत्र का प्रबल समर्थक है इसलिए नेपाल पाकिस्तान एवं बंग्लादेश की नीतियों का समर्थन करने लगा है। इस तथ्य की पुष्टि नेपाल के इस कदम से स्पष्ट होती है कि उसने अफगानिस्तान को दक्षेस (सार्क) में प्रवेश कराने के भारत के प्रस्ताव के मुकाबले चीन को इस संगठन में प्रेक्षक के तौर पर शामिल कराने का प्रयास किया।[16]

उपरोक्त तथ्यों की विवेचना एवं विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि भारत एवं नेपाल एक - दूसरे पर सकारात्मक एवं नकारात्मक प्रभाव डालते रहते हैं, दोनों राष्ट्रों में घटने वाली घटनाओं का एक दूसरे पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है और यह प्रभाव राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक रूप में प्रकट होता है दोनों राष्ट्रों के साथ ही साथ विश्व के स्त्रातजिक परिवेश को भी प्रभावित करता है।

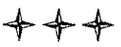

REFERENCES

1. Dr. K.P. Singh, "Raksharth", Vol 4/5, 1 June 2003 PP. 81-87.
2. Ibid...
3. S.K.Jha, "Uneasy Partners: India And Nepal In The Post Colonial Era", New Delhi,1975 ; P-9; And G.P. Bhattacharya, "India And Politics Of Modern Nepal", Culcutta,1970,PP.3-13.
4. The Hindu, Madrass, 16 Feb,1950.
5. "Nepal News",New delhi, 1 April, 1987, Vol - 26, P-7.
6. "Nepal News", New delhi, 2 Jan,1990,Vol - 23.
7. Anand Swaroop Verma, "Hindustan", Varanasi, 8 May, 2003.
8. Ibid...
9. Ibid...
10. S.D.Muni, "India And Nepal : A Changing Relationship", New Delhi, 1992, P.16.
11. L.B.Hamal, "Contemporary Nepal : Triumphs And Agonies of The Nepali People", Varanasi 1994, PP. 74 - 82.
12. "Hindustan", Varanasi, 2 Feb., 2005.
13. "Dainik Jagran", Varanasi,12 Feb., 2005.
14. "Hindustan", Varanasi, 3 Feb., 2005.
15. "Dainik Jagran", Varanasi, 10 Feb., 2005.
16. K.Subhramanium, "Dainik Jagran", Varanasi, 21 Nov., 2005.

--x--